ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 182-185
ISSN NO.- 2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.- 2582-2454 (Online)
Vol.-17, No.- I, Issues-31, YEAR- Jan.-March-2024

वेदों का पर्यावरण

जितेन्द्र कुमार द्विवेदी
संस्कृत विभाग, कमला राय महाविद्यालय, गोपालगंज (जय प्रकाश विश्वविद्यालय), छपरा (बिहार) भारत

Received-18.03.2024, Revised-25.03.2024, Accepted-30.03.2024 E-mail:singh8853amar@gmail.com

***सारांशः** सामान्यतया पर्यावरण के विषय में कह सकते है कि जो जीव–धारियों की स्थिति को सर्वाधिक रुप से प्रभावित करता है, वह पर्यावरण है। हमारे पूर्वज ऋषि–मुनि आदि भी पर्यावरण की अपरिहार्य महत्ता से पूर्णतः अवगत रहे है। यही कारण है कि पर्यावरण के ही स्वरुप–भूत प्रकृति सम्बन्धी अनेक ऋचायें वेदों में प्राप्त होती हैं। वैदिक रचनाओं में पर्यावरण के सभी प्रमुख तत्वों के प्रति देवत्व का भाव प्राप्त होता है। पर्यावरण के अभिन्न स्वरुप पंच–महाभूतों में पृथ्वी सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। संसार के हित के लिए पर्यावरण का संरक्षण एवं शुद्धिकरण आवश्यक है। इस परम आश्चर्यमय संसार की रचना पंचमहाभूतों से हुई है। अतः इसकी निर्मलता एवं शुद्धता के लिए इसका सन्तुलित एवं समुचित उपयोग होना चाहिये।*

पर्यावरण शब्द का अर्थ है "प्राणियों का चतुर्दिक् आच्छादन"। यह परि एवं आ उपसर्ग पूर्वक घेरना अर्थवाली वृ धातु से ल्युट् प्रत्यय लगाकर पर्यावरण शब्द बना है। जिसका प्राणियों के अस्तित्त्व पर पूर्ण रूप से प्रभाव पड़ता है वह पर्यावरण है। आँग्ल भाषा में पर्यावरण के लिए Envioroment शब्द का प्रयोग किया जाता है। पञ्चमहाभूत अथवा प्रकृति को पर्यावरण के अन्तर्गत मुख्य रूप से परिगणित किया जा सकता है।

कुंजीभूत शब्द– पर्यावरण, सर्वाधिक रुप, अपरिहार्य महत्ता, वैदिक रचनाओं, अभिन्न स्वरुप, पंच–महाभूतों, आश्चर्यमय संसार।

दूषित पर्यावरण वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व के लिए एक गम्भीर समस्या बन चुका है। प्राकृतिक संसाधनों के असीमित दोहन एवं दूरदर्शिता के अभाव में किये जाने वाली तथाकथित विकास के परिणामस्वरूप सम्पूर्ण विश्व के प्राणियों का जीवन संकटापन्न है। इस पर्यावरणीय विकृति से चिन्तित तथा मानवता के संरक्षण के प्रति उत्सुक कतिपय वैज्ञानिकों ने पर्यावरण विज्ञान को एक नवीन विषय की ओर ध्यान आकृष्ट कराते हुए इससे परिचित कराने का स्तुत्य प्रयास किया है, इसी का परिणाम है कि पारिस्थितिकी (Ecology) के रूप में पर्यावरण की शिक्षा देना पाठ्यक्रमों का एक अनिवार्य अंग बन गया है, किन्तु इस तथ्य को विस्मृत नहीं किया जा सकता कि पर्यावरण की चिन्ता वर्तमान समय की ही उपलब्धि नहीं है। भारतीय संस्कृत वाङ्मय में इस बात का प्रमाण है कि मानव जीवन से सम्बन्धित अनेकानेक समस्याओं की तरह हमारे ऋषि, मुनि, कवि–लेखक, चिकित्सक तथा अध्यापक आदि के मनोमस्तिष्क को पर्यावरण की समस्या पीड़ित करती रही है तथा एतद्विषयक समाधान का मार्ग भी उनके द्वारा खोजा गया है। वैदिक साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि स्वच्छ पर्यावरण की अवधारणा हमारे वैदिक काल के मनीषियों के हृदय पटल में सृष्टि के आदिकाल से ही बनने लगी थी। अतएव हमारे वेदों में प्रकृति प्रेम–तत्त्वों से सम्बद्ध शान्ति सूक्त का गान किया गया है :

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिःपृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः
शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिः सर्वे देवाः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः।[1]

अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में प्रसिद्ध सूक्ति है–माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः। इसका अभिप्राय यही है कि हमारी पृथिवी वात्सल्य युक्त माँ की भाँति हमारा पालन–पोषण करती है तो वहीं पर हमारा भी परम कर्त्तव्य बनता है कि हम अपनी जननीस्वरूपा पृथिवी की सर्वतोभावेन रक्षा–सुरक्षा करें, उसे इतना स्वच्छ और सुन्दर बना दें कि वह रोग–शोक से सर्वथा रहित हो जाय। हमारा यह भी कर्त्तव्य है कि हम पर्यावरण के सभी अवयवों के प्रति आदरभाव रखें, उनकी शुद्धि के विषय में प्रयत्न करें, उनमें सन्तुलन बनाये रखने के लिए सतत् परिश्रम करें, तथा ईश्वर से प्रार्थना करें कि ये सभी तत्त्व हमें सुख–शान्ति प्रदान करें।

वैदिक साहित्य का अध्ययन करने से हमें बड़े हर्ष और गौरव का अनुभव होता है, इसमें पर्यावरण के सभी आवश्यक अवयवों के प्रति आदरभाव व्यक्त किया गया है। अग्नि, वायु, आकाश, जल और पृथिवी– इन पञ्चमहाभूतों को देवता मानकर, अनेक सूक्तों के माध्यम से इनकी स्तुति की गयी है। इसके अतिरिक्त इन पञ्चमहा– भूतों के संरक्षक के रूप में इन्द्र, विष्णु आदि देवताओं से भी प्रार्थना की गयी है।

ऋग्वेद की पहली ही ऋचा अग्निदेव के महत्त्व को समर्पित है :
ॐ अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्यं देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ।[2]

अग्नि के विषय में मन्त्रद्रष्टा ऋषियों की मान्यता है कि जिस अहिंसक यज्ञ में अग्नि की पूजा होती है, वही यज्ञ सभी देवों के अनुकूल होता है। जिस प्रकार पिता पुत्र का सहायक होता है, उसी प्रकार यह अग्नि विद्वानों के प्रत्येक कार्य में सहायक होता है। जब तक इस शरीर में अग्नि की ऊष्मा रहती है, तभी तक यह शरीर क्रियाशील रहता है। इस प्रकार इस शरीर में रहकर यह अग्नि इन्द्रियों को भी शक्ति पहुँचाता रहता है।

तेजस्वी अग्नि विश्व में दर्शनीय उषा देवी से पहले प्रदीप्त होता है, ग्रामों की रक्षा करता है, तथा यज्ञों में मनुष्यों का अग्रगामी अर्थात् मार्गदर्शक है :

अग्ने पूर्वा अनूषसों विभावसो दीदेथ विश्वदर्शतः ।
असि ग्रामेसविता पुरोहितोऽसि यज्ञेषु मानुषः ।।[3]

वायु जगत् का प्राणतत्त्व है। इसके बिना प्राणियों के अस्तित्व की कल्पना ही नहीं हो सकती। इसी के परिणाम स्वरूप पर्यावरण

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-17, No.- I, Issues-31, YEAR- Jan.-March-2024

का एक नाम वातावरण है। ऋग्वेद में प्रजापतिरूप पुरुष के प्राणों से इसकी उत्पत्ति मानी गई है–प्राणाद् वायुरजायत ।[4]

इसको देवताओं का भी प्राणभूत तत्त्व माना गया है तथा वातसूक्त में इसकी स्तुति की गयी है– ततो देवानां समवर्ततासुरेकः[5] तथा

आत्मा देवानां भुवनस्य गर्भो यथावशं चरति देव एषः।
घोषा इदस्य शृण्विरे न रूपं तस्मै वाताय हविषा विधेम।।[6]

मरुद्गणों का सम्मिलित रूप भी वायु ही माना गया है। वैदिक साहित्य में इनकी प्रार्थना, इनका आवाहन, इनकी प्रशंसा प्रायः अग्नि के साथ उपलब्ध होती है। इनकी सम्मिलित प्रार्थना सनातन, पराक्रम, आयु, व्रतों की रक्षा, स्वास्थ्य देने वाली मानी गई है। हमारे मनीषियों ने जल को जीवन माना है। वैदिक साहित्य में इस महत्त्वपूर्ण महाभूत की चर्चा एवं प्रशंसा अनेक सूक्तों के माध्यम से की गई है। वैदिक साहित्य में कहा गया है :

जो जल अन्तरिक्ष में है, पृथिवी में नदी के रूप में प्रवाहित होते हैं, लोगों को पवित्र करते हैं वे ही दिव्यगुण सम्पन्न जल इस संसार में रहने वाले हम सभी प्राणियों की रक्षा करें (ऋग्वेद, 7/49/2) जल समस्त रोगों को दूर ही नहीं करता, अपितु रोगों के कारणों को भी मिटा देने वाला है, समस्त रोगों की औषधि है, ऐसा जल सबकी रक्षा करे (ऋग्वेद, 10/137/6)। जल को देवता मानकर कहा गया है कि हे जल! इस जीवन में हम अनुकूलतापूर्वक तुम्हारा सेवन करते हैं, तुम्हारे रस, स्पर्श, स्वादगुण से सुपरिचित होते हैं। अतएव हे जलों के प्रेरक प्रभो! आप स्वयं तेजोरूप हैं, मुझे भी तेजस्विता से युक्त कीजिए (ऋग्वेद, 10/9/9)। अथर्ववेद में भी जल को औषधि के रूप में मान्यता देते हुए अनेक सूक्त लिखे गए हैं–अथर्ववेद, 1/4, 5, 6, 33 आदि ।

संसार को शस्यसम्पन्न और निवास के योग्य बनाने वाले पर्जन्य (जल बरसाने वाले मेघ) को पिता मानकर उससे अपने पालन की प्रार्थना की गई है–

पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु।[7]
प्रवाता वान्ति पतयन्ति विद्युत उदोषधीर्जिहते पिन्वते स्वः।
इरा विश्वस्मै भुवनाय जायते यत् पूर्जन्यः पृथिवीं रेतसावति ।।
यस्य व्रते पृथिवी नन्नमीति यस्यथ व्रते शफवज्जर्भुरीति।
यस्य व्रत ओषधीर्विश्वरूपाः स नः पर्जन्यः महि शर्म यच्छ ।।
दिवो नो वृष्टिं मरुतो ररीध्वं प्रतिन्वत वष्णो अश्वस्य धाराः ।
अर्वाङ्तेन स्तनयित्नुनेह्यपो निषिञ्चन्नसुरः पिता नः।।[8]

नदियाँ पर्यावरण को सुखद, सुन्दर एवम् आर्द्र बनाती हैं, अपने दिव्य जल से कृषिकार्य में सहायता पहुँचाती हैं। बादलों से बरसने वाला जल एक निश्चित अवधि में ही पृथ्वी को मिलता है, जबकि नदियों का जल पृथिवी में रहने वाले प्राणियों को सदैव उपलब्ध रहता है। नदियों की इसी उपयोगिता को समझकर ही वैदिक साहित्य में इनको माता एवं भगिनी मानकर इनकी पूजा की गई है, ऋग्वेद में विश्वामित्र–नदी संवाद सूक्त से दो ऋचाएँ प्रस्तुत हैं :

अच्छा सिन्धुं मातृतमामयासं विपाशमुर्वा सुभगामगन्म ।
वत्समिव मातरा संरिहाणे समानं योनिमनु संचरन्ती ।।
एना वयं पयसा पिन्वमाना अनु योनि देवकृतं चरन्तीः ।
न वर्तवे प्रसवः सर्ग तक्तः किं युर्विप्रो नद्यो जोहवीति।।9

वैदिक ऋषियों ने जल की शुद्धि का भी स्पष्ट निर्देश देते हुए कहा है कि सूर्यकिरणों से युक्त होता हुआ जल प्राणियों को कोई हानि नहीं पहुँचाता। जिन नदियों का जल हमारी गायों के पीने के योग्य है, वे नदियाँ पूज्य हैं, संरक्षणीय हैं।

सभी प्राणियों के लिए पञ्चमहाभूतों में पृथ्वी सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि हम सभी इस पर रहते हुए ही अग्नि, वायु, जल एवम् आकाशरूप अन्य महाभूतों से मिलने वाले सुखों को भोग सकते हैं। इसीलिए हम सभी पृथ्वीवासी भी कहे जाते हैं। वेदों में मातृभूमि, मातृसंस्कृति और मातृभाषा–इन तीनों देवियों को उपासना के योग्य माना गया है। अथर्ववेद में तो पृथ्वी, अन्तरिक्ष एवं द्युलोक को अपना परिवार मानते हुए उनसे सम्मिलित रूप से अपने कल्याण के लिए प्रार्थना की गई है :

भूमिमातादितिनां जनित्रं भ्रतान्तरिक्षमभिशस्त्या नः।
द्यौर्नः पिता पित्र्याच्छं भवाति जामिमृत्वा मावं पात्सि लोकात् ।।[10]

पृथिवीरूप महाभूत की स्तुति के लिए अथर्ववेद का पृथिवीसूक्त सर्वाधिक प्रशंसनीय एवं स्मरणीय है। तदनुसार–मनुष्यों के मध्य में, जिसके अनेक, विघ्नबाधाओं से रहित ऊँचे, नीचे और समतल भूमि के भाग हैं, जो पृथिवी अनेक प्रकार की शक्तियों वाली और तेजवाली औषधियों को प्राणियों के लिए धारण करती है, वह पृथ्वी माता हमारे लिए विस्तार को प्राप्त हो और समृद्धशाली हो, सबकी जननी, औषधियों को उत्पन्न करने वाली, धर्म द्वारा धारण की गई, स्थिर, सुख प्रदान करने वाली, सुविस्तृत, कल्याणकारिणी मातृभूमि की हम सभी पृथ्वीवासी सेवा करते रहें।

पञ्चमहाभूतों की सम्मिलित प्रार्थनाएँ भी हमें वैदिक साहित्य में उपलब्ध हो जाती हैं। आकाश तो प्रायः द्युलोक एवं अन्तरिक्ष के रूप में पृथ्वी के साथ ही हमारे आदर का पात्र बना है। इनके सम्मिलित रूप को द्यावापृथिवी एवं रोदसी शब्दों से अभिहित किया गया है तथा इनको प्राणियों का माता–पिता एवं संरक्षक माना गया है :

उरुव्यचसा महिनी असश्चतां पिता माता च भुवनानि रक्षतः ।
सुधृष्टमे वपुष्ये न रोदसी पिता यत् सीमभि रूपैरवासयत्।।[11]

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-17, No.- I, Issues-31, YEAR- Jan.-March-2024

हमारा पर्यावरण समस्त प्राणियों के लिए सुखद हो, एतदर्थ वैदिक साहित्य में ईश्वर से प्रार्थना करने के साथ–साथ पृथिवीवासियों के कर्त्तव्यों की भी पर्याप्त चर्चा की गयी है। ऋग्वेद का हिरण्यगर्भसूक्त हमें उस ईश्वर की प्रार्थना करने की प्रेरणा देता है, जिसके कारण यह द्युलोक शक्तिशाली है, पृथ्वी स्थिर है, प्रकाशलोक स्थिर होकर रुका है, सूर्य अन्तरिक्ष में लोकों को नाप रहा है, प्राणियों की रक्षा के लिए स्थिर किए गए आकाश और पृथिवी, मन से जिसे देखते हैं। ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कहा गया है :

त्वं समुद्रो असि विश्ववित्कवे तवेमाः पञ्च प्रदिशो विधर्मणि ।
त्वं द्यां च पृथिवीं चाति जभ्रिषे तव ज्योतीषि पवमान सूर्यः।।[12]

यजुर्वेद में भी ईश्वर की प्रार्थना करते हुए कहा गया है :

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्धी धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषां जिष्णू रथोः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे–निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।। [13]

पर्यावरण को प्राणिमात्र के लिए हितकारक बनाने के लिए आवश्यक है कि इस सम्बन्ध में ईश्वर की प्रार्थना करने के अतिरिक्त हम इसकी शुद्धि एवं संरक्षण का प्रयत्न भी करें, प्राकृतिक पदार्थों के सन्तुलन को बनाये रखें और उनके साथ मनमाना व्यवहार न करें। वैदिक साहित्य में वातावरण की शुद्धि, अच्छी फसल की प्राप्ति और प्राणियों के पालन–पोषण आदि की दृष्टि से यज्ञों के माहात्म्य का उद्घोष किया गया है। यजुर्वेद में यज्ञ की महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है :

यज्ञस्य दोहो विततः पुरुत्रा सो अष्टधा दिवमन्वाततान ।
स यज्ञ धुक्ष्व महि मे प्रजायां रायस्पोष विश्वमायुरशीय स्वाहा।।[14]
यज्ञो देवानां प्रत्येति सम्नमादित्यासो भवता मृडयन्तः ।
आ वोऽवाची सुमतिर्ववृत्यादं होश्चिद्या वरिवोवित्तरासत ।।[15]

पर्यावरण के संरक्षण के लिए इन्द्र के सत्प्रयासों को इन्द्रसूक्त के माध्यम से बड़ी सुन्दरता से प्रस्तुत किया गया है–

यः पृथिवीं व्यथमानामदृंहद्यः पर्वतान्प्राकुपितौं अरम्णात्।
यो अन्तरिक्षं विममे वरीयो यो द्यामस्तभ्नात्स जनास इन्द्रः ।।[16]

जगत् को जल आवश्यकतानुसार ही उपलब्ध होना चाहिए। अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बाढ़, सूखा, जल–प्रदूषण आदि जलसम्बन्धिनी आपदाएँ हैं। इनसे संसार को बचाने के लिए वैदिक साहित्य में इन्द्र, पर्जन्य, नदी आदि देवताओं से प्रार्थना की गई है। ऋग्वेद में पर्जन्य से प्रार्थना की गयी है कि वह अपेक्षित जल की वृष्टि करने के फलस्वरूप रेगिस्तान को चलने योग्य बना चुका है, औषधियों को उत्पन्न करके प्रशंसा भी प्राप्त कर चुका है, अतएव उसे अब अपनी वृष्टि को रोक लेना चाहिए। नदियों को बहिन मानकर उन्हें रक्षणीय माना गया है तो उनसे भी आशा की गयी है कि वे भी लोगों को हानि न पहुँचाएँ। नदियों से विनम्र निवेदन किया गया है कि उनका जल ऐसे बहे कि उससे वाहनों की गति अवरुद्ध न हो, उनका जल राष्ट्र के कृषि आदि अच्छे कार्यों में प्रयुक्त हो, दोषरहित हो, बाढ़ रूप हिंसा से रहित और स्वास्थ्यप्रद गुणों से युक्त हो :

उद्व ऊर्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत ।
मा दुष्कृतौ व्येनसाऽघ्न्यौ शूनमारताम् ।।[17]

पर्यावरण की रक्षा–सुरक्षा में वनों और वृक्षावलियों का भी योगदान पर्याप्त मात्रा में रहता है। शुक्ल यजुर्वेद के 16वें अध्याय में अधोलिखित मन्त्र– 'नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः, वनानां पतये नमः, वृक्षाणां पतये नमः, नमो वन्याय च।'[18]

वनों और वृक्षों की उपयोगिता को ही पुष्ट करते हैं। ऋषि–मुनियों ने वनों का माहात्म्य समझाने की दृष्टि से ही प्रार्थना की है पृथिवी में विद्यमान वन प्राणियों के लिए सुखदायक हों– 'अरण्यं ते पृथिवि स्योनमस्तु ।'[19] तथा वृक्षारोपण का भी निर्देश दिया है : 'वनस्पतिं वने आस्थापयध्वम् ।'

यह तथ्य बारम्बार मिलता है कि पृथिवी एवं प्रकृति स्वरूपा पृथिवी हमारी पूज्या है। अतएव हमारा परम कर्तव्य है कि हम पृथिवी से जिन पदार्थों का खनन करें, उनकी भरपायी भी शीघ्र करने का प्रयत्न करें, औषधियाँ प्राप्त करते समय पृथिवी के मर्मस्थल पर चोट न पहुँचायें और उसकी उर्वरता की रक्षा का ध्यान रखें। यजुर्वेद की वाजसनेयी संहिता में भी औषधि की मूल पृथ्वी की हानि न हो, ऐसा उपदेश दिया गया है। उसे माता की तरह पूज्य मानकर उसमें रहने वाले प्राणियों की रक्षा का निर्देश देकर पर्यावरण संरक्षण की ही पृष्टि की गई है।

वेदों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि पृथ्वी, जल, वायु, औषधि आदि को देवस्थानीय माना जाता है। अतएव इनको दूषित करना पाप की श्रेणी में आता है। इस पाप से दूर रहकर पृथ्वी, जलादि का संरक्षण सभी मनुष्यों का नैतिक दायित्व है। हमारा वातावरण इतना शुद्ध होना चाहिए कि सूर्य की किरणे सीधे पृथ्वी पर आ सकें और हम रोगों से लड़ सकें।[19]

ईश्वर ने पञ्चमहाभूतों से हमारी इस सुन्दर सृष्टि का निर्माण किया है। अतएव इसका पर्यावरण विशुद्ध होने के लिए आवश्यक है कि ये पञ्चमहाभूत जगत् को सन्तुलित करने के लिए उचित अनुपात में पवित्रता के साथ प्रयुक्त हों। जब ये पाँचों शान्तिदायक अर्थात् कल्याणकारी होंगे तभी पर्यावरण मानवोपयोगी होगा और अधोलिखित शुभकामनाएँ सार्थक हो सकेंगी :

मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ।।
मधु नक्तमुतोषसो मधुमत् पार्थिवं रजः।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-17, No.- I, Issues-31, YEAR- Jan.-March-2024

मधुद्यौरस्तु नः पिता ।
मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः ।।
शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा ।
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुक्रमः।।[20]

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अथर्ववेद, 19/9/14.
2. ऋग्वेद 1/44/10.
3. पुरुषसूक्त 10/90/13.
4. वात सूक्त 10/121/7.
5. वात सूक्त 10/168/4.
6. अथर्ववेद, 12/12.
7. ऋग्वेद, पर्जन्यसूक्त, 5/83/4–6.
8. ऋग्वेद, 3/33/3–4.
9. अथर्व0, 6/120/2.
10. अथर्व0, 12/1/2, 17.
11. ऋग्वेद, 1/160/2.
12. ऋग्वेद 1/86/29.
13. यजर्वेद, 22/22.
14. यजु0, 8/62.
15. यजु0, 33/68.
16. ऋग्वेद, 2/12/2.
17. ऋग्वेद, 3/33/13.
18. अथर्ववेद, 12/11.
19. सामवेद, पूर्वार्चिक 4 द, 5 में 7.
20. ऋग्वेद, 1/10/6–9.

*****